शुक्ल यजुर्वेदीय काण्व शाखा अन्तर्गत

ईशावास्योपनिषद्

सान्वयार्थ 'तात्पर्य प्रकाशिनी' हिन्दी व्याख्या सहित

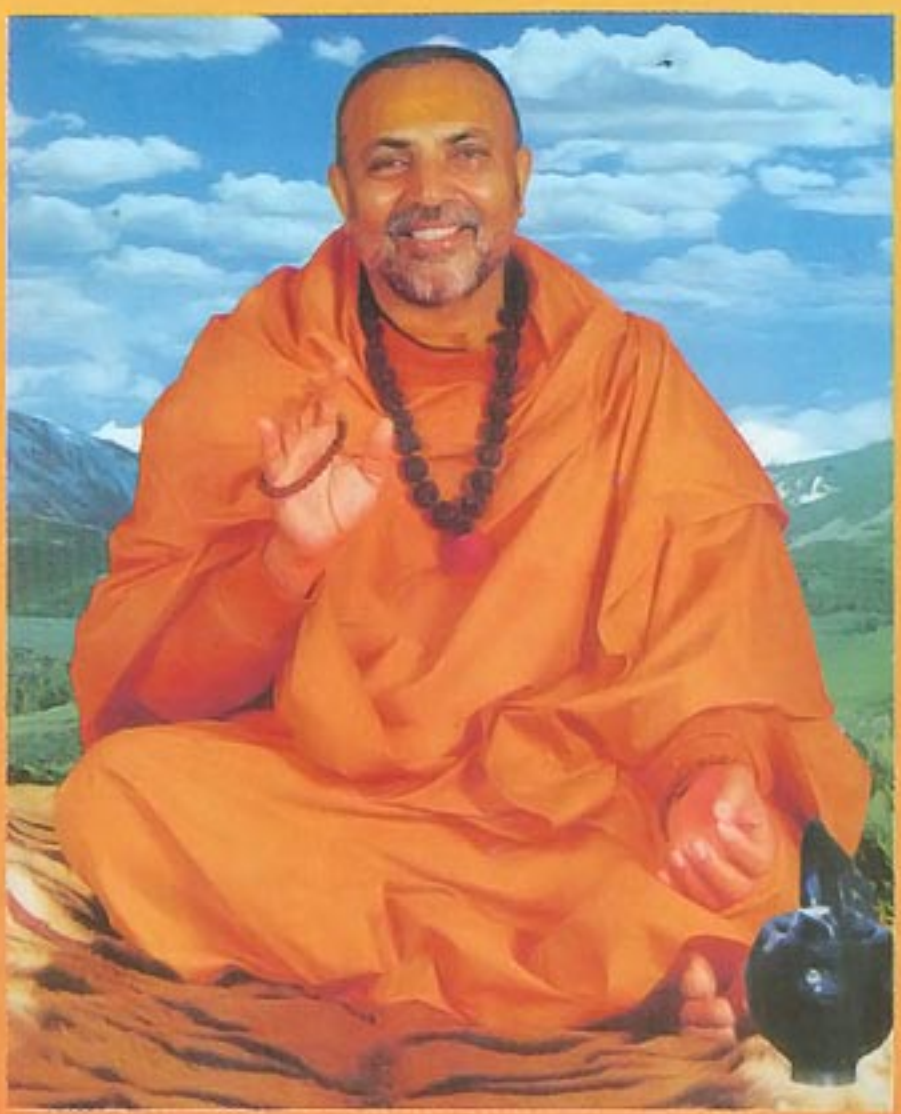

-:व्याख्याकार:-

अनन्त श्री विभूषित पूज्यपाद माधवपीठाधिपति महामण्डलेश्वर

स्वामी अखण्डानन्दसागर महाराज

वेदान्ताचार्य

www.OmShreeMadhavanandji.org

सम्पादक :- ब्रह्मचारी हरिहरानन्द वेदान्ताचार्य

प्रथम संस्करणः- ५००० प्रतियाँ (सर्वाधिकार सुरक्षित)

प्रयागराज पूर्ण कुम्भ महापर्व सम्वत् २०५७, सन् २००१ पर अमूल्य वितरणार्थ

पुस्तक प्राप्ति स्थानः-

श्री माधवानन्द आश्रम,
मु० पो० चांदोद, त-डभोई,
जि- वडोदरा, गुजरात-३९११०५
फोन नं०- ०२६६३-३३३६२

श्री माधवानन्द आश्रम,
दक्षेश्वर रोड़, जगजीतपुर, कनखल,
हरिद्वार, उत्तरांचल-२४९४०८
फोन न०-०१३३-४१६६७५

पूज्य पाद अनन्त श्री विभूषित प्राप्तविदेहकैवल्य
महामण्डलेश्वर स्वामी श्री अखण्डानन्द सागर जी महाराज
द्वारा संस्थापित सेवाप्रकल्प तथा संस्थाएं

सेवा प्रकल्पः- ❋ आध्यात्मिक ज्ञानयज्ञ ❋ अन्नक्षेत्र ❋ सत्संग शिविर ❋ यात्री निवास ❋ शिशु संस्कार शिविर ❋ गौशाला ❋ धर्मार्थ औषधालय ❋ छात्रालय ❋ निःशुल्क नेत्र, दन्त तथा सर्वरोग निदान कैम्प।

संस्थायेंः-१. श्री माधवानन्द आश्रम, चांदोद त. डभोई, जि. वडोदरा, फोन नं. ०२६६३-३३३६२, २. **श्री माधवानन्द आश्रम,** दक्षेश्वर रोड, जगजीतपुर कनखल हरिद्वार, फोन नं. ०१३३-४१६६७५, ३. **श्री माधव गुरुकुल,** वल्लभविद्यानगर (बाकरोल) जि. आणन्द, फोन नं. ०२६९२-३११९७, ३७७६४, ४. **आन्तरराष्ट्रीय श्री माधवानन्द आश्रम,** मु. पो. सुघड़, एअर पोर्ट रोड, नर्मदा कैनाल के पास जि. गांधीनगर, फोन नं. ०२७१२-७६१५१, ५. **श्री माधवानन्द आश्रम,** उदयनगर सो. वि.-१ कतारगांव रोड, सूरत-४, फोन नं. ०२६१-४८४६१०, ६. **श्री माधवानन्द आश्रम,** न्यू एरोड्राम रोड़, पटेल पार्क के सामने, भावनगर, फोन नं. ०२७८-४२८६१४ (पी.पी.), ७. **स्वामी श्री शिवोऽहं सागर संस्कार केन्द्र,** आर.टी.ओ. रोड़, शिवोऽहंनगर सो. भावनगर ८. **श्री माधवानन्द आश्रम,** ७०२, विशाल अपार्टमेन्ट, सोनीवाड़ी के सामने, शिम्पोली रोड़, बोरीवली (वेस्ट) मुम्बई ९. **श्री सच्चिदानन्द सेवक मण्डल,** न्युजर्सी, यू.एस.ए. १०. **श्री माधवानन्द आश्रम,** मु.पो. आकरु, त. धंधुका , जि. अहमदाबाद, ११. **श्री माधवानन्द आश्रम,** मु.पो. पीपरीया, त. धंधुका, जि. अहमदाबाद, १२. **श्री माधवानन्द आश्रम,** मु.पो. नावड़ा (नया), वाया-बरवाला,

www.OmShreeMadhavanandji.org

SAUJANYA

E-Book Conversion Suggested & Managed by
Shree Babubhai Vallabhbhai Mangukiya - Gariyadhar

Technical Support by
Prashant Babubhai Mangukiya
Kalpesh Babubhai Mangukiya

General Support & Help by
Shree Akhandanand Sagar Yuvak Mandal, Surat

Book's Printed Copy Provided by
Shree Madhavanand Ashram
Shree Sachchidanand Sevak Mandal Trust, Surat

Price: Precious, Inestimable

FREE Download from
www.OmShreeMadhavanandji.org

Disclaimer: This e-book is available for free download from official website of Shree Madhavanand Ashram (Shree Sachchidanand Sevak Mandal Trust) www.OmShreeMadhavanandji.org only. You can download this e-book for personal use and gaining knowledge about Shree Madhavanand Ashram. This e-book Can Not be used for Sell, Print or any other Commercial purpose that will generate direct or indirect income for individual or company by any means. Also content from this e-book or same Can Not be copied to use in other publications, website, blog post, articles or any other purpose. Please do not post this ebook on other website for download or do not forward it by email attachments or any other means. You can send our website url to your friends & family for download e-book from there.

शुक्ल यजुर्वेदीय काण्व शाखा अन्तर्गत

ईशावास्योपनिषद्

सान्वयार्थ 'तात्पर्य प्रकाशिनी' हिन्दी व्याख्या सहित

-:व्याख्याकार:-

अनन्त श्री विभूषित पूज्यपाद माधवपीठाधिपति महामण्डलेश्वर

स्वामी अखण्डानन्दसागर महाराज

वेदान्ताचार्य

प्रयागराज पूर्ण कुम्भ महापर्व संवत् २०५७ पर धर्मार्थ वितरित

www.OmShreeMadhavanandji.org

वक्तव्य

शुक्ल यजुर्वेद संहिता के चालीसवे अध्याय के रूप में प्राप्त यह ईशावास्योपनिषद सभी उपनिषदों में प्रथम उपनिषद मानी गई है। क्योंकि यह उपनिषद वेद के मंत्र भाग की होने के साथ-साथ विषय की दृष्टि से भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें संपूर्ण वेद के प्रतिपाद्य विषय 'ज्ञाननिष्ठा' तथा 'कर्मनिष्ठा' का संक्षेप में विवेचन हुआ है। मनुष्य को आत्मतत्त्व का प्रकाश करते हुए ज्ञान की योग्यता को प्रदान करने वाले साधन के प्रति आकृष्ट करने के लिए सत्कर्म और उपासना का साथ-साथ अनुष्ठान इसमें बताया गया है। यह उपनिषद एक ऐसा दर्पण है जिसमें मनुष्य अपना 'योग्यता' रूपी मुख को देखते हुए आगे की साधना का मार्गदर्शन पाता है। गीता के निष्काम कर्मयोग रूपी दूध का स्त्रोत इस उपनिषद रूपी गाय के द्वितीय मन्त्र रूपी स्तन से प्रस्फुटित हुआ प्रतीत होता है। इसका प्रथम मन्त्र 'ईशावास्यम्' इत्यादि होने के कारण इस उपनिषद का नाम 'ईशावास्योपनिषद' पड़ा है। आकार में छोटी होने पर भी इसका महत्त्व एवं प्रामाण्य सर्वसम्मत है।

इस उपनिषदकी तात्पर्यप्रकाशिनी हिन्दी व्याख्या **'परम पूज्य अनन्त श्री विभूषित प्राप्तविदेहकैवल्य महामण्डलेश्वर स्वामी अखण्डानन्द सागर जी महाराज'** का कृपा प्रसाद है। उनकी शाश्वत पूण्य स्मृति के लिए प्रयाग राज पूर्ण महाकुम्भ पर्व सं० २०५७ पर **अनन्त श्री विभूषित माधव पीठाधिपति स्वामी जगदीशानन्द सागर महाराज की शुभेच्छा से धर्मार्थ** वितरणार्थ प्रकाशित किया गया है। आशा है कि सभी मुमुक्षु इस उपनिषद का तात्पर्यार्थ हृदयंगम करके आत्मतत्त्व का अपरोक्ष अनुभव करके परमानंद के भागी बने यही भगवान सच्चिदानन्द परमात्मा से प्रार्थना करते है।

मकर संक्राति सं० २०५७

प्रयागराज पूर्ण महाकुम्भ पर्व

सदगुरू चरणानुचर

ब्रह्मचारी हरिहरानन्द वेदान्ताचार्य

www.OmShreeMadhavanandji.org

ॐ

।। नमामि भगवत्पादं शंकरं लोक शंकरम् ।।

।। ईशावास्योपनिषद् ।।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।
ॐ शांतिः शांतिः शांतिः।।

अन्वयः- अदः पूर्णम् इदम् पूर्णम् पूर्णात् पूर्णम् उदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय पूर्णम् एव अवशिष्यते।

अन्वयार्थः-

अदः : वह
पूर्णम् : पूर्ण है।
इदम् : यह
पूर्णम् : पूर्ण है
पूर्णात् : (क्योंकि) पूर्ण से
पूर्णस्य : पूर्ण के
पूर्णम् : पूर्णत्त्व को
आदाय : लेकर
पूर्णम् : पूर्ण
एव : ही

www.OmShreeMadhavanandji.org

पूर्णम् : पूर्ण *अवशिष्यते* : अवशेष रहता है।
उदच्यते : प्रकट होता है।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- यह मंत्र शुक्लयजुर्वेद का शांति पाठ है। इसमें शांतिपाठ के छल से सम्पूर्ण वेदांत का तात्पर्य जीव ब्रह्मात्मैकत्त्व का अभेद रुप से प्रतिपादन किया गया है। साथ-साथ आध्यात्मिक आधिदैविक आधिभौतिक त्रिविध दुःखो की आत्यंतिक निवृत्ति की कामना की गई है।

तत्पद का लक्ष्य निरुपाधिक ब्रह्म आकाश के समान व्यापक तथा पूर्ण है। अर्थात् अपरिच्छिन्न है। और त्वंपद का लक्ष्यार्थ जो जीव वह भी उपाधि रहित अवस्था में पूर्ण है। जैसे महाकाश से उत्पन्न होने वाला घटाकाश उपाधिअंश के त्याग करने से महाकाश ही है वैसे ही महाकाश स्थानीय पूर्ण ब्रह्म से उत्पन्न होने वाला घटाकाश स्थानीय जीव भी उपाधी अंश के त्याग करने से पूर्ण ब्रह्म ही है क्योंकि पूर्ण से पूर्ण का उदय होता है यह श्रुति बता रही है। यदि जीव पूर्ण है तो उनका अनुभव पूर्ण रुप से होना

www.OmShreeMadhavanandji.org

चाहिए ?

इस बाद को श्रुति बताते हुए कह रही है की पूर्ण के पूर्णत्त्व को लेकर पूर्ण ही अवशेष रहता है अर्थात् घट के साथ दिखने वाला आकाश अपूर्ण प्रतीत होने पर भी घटांश को छोड़कर देखने से पूर्ण ही प्रतीत होता है। वैसे ही उपाधि के साथ दिखने वाला ब्रह्म अपूर्ण प्रतीत होते हुए भी उपाधि अंश को छोड़कर देखने से वह पूर्ण ही है। यह भाव है।

दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिः साधनचतुष्ट्य सम्पन्न उत्तम अधिकारी मुमुक्षु शिष्य को ब्रह्म का व्यापक स्वरुप बताते हुए कहते हैं -

ॐ ईशावास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।। १।।

अन्वयः- जगत्याम् यत्किञ्चिद् जगत् इदम् सर्वम् इशा वास्यम् तेन त्यक्तेन भुञ्जिथाः कस्यस्वित् धनम् मा गृधः।

www.OmShreeMadhavanandji.org

अन्वयार्थः

जगत्याम् : अखिल ब्रह्मांड में
यत्किञ्चित् : जो कुछ भी
जगत : चराचर जड़ चेतन रुप
इदम् : यह
सर्वम् : सम्पूर्ण (विश्व)
ईशा : ईश्वर से
वास्यम् : व्याप्त है।
तेन : उनका
त्यक्तेन : त्याग पूर्वक
भूञ्जीथाः : पालन करें (रक्षा करें)
कस्यस्वित् : किसी भी प्रकार के
धनम् : धन की
मा गृधः : आकांक्षा न करें।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- सम्पूर्ण पंञ्चभूतात्मक सृष्टि में जो कुछ भी कार्यकारणात्मक चर अचर जड़ चेतन रुप प्रपंच प्रतीत होता है यह सब निरुपाधिक ब्रह्म से व्याप्त है। जिस प्रकार कटक कुंडल आदि स्वर्ण से व्याप्त है तथा घट मृतिका से व्याप्त है। ठीक इसी प्रकार कारण दृष्टि से सम्पूर्ण भूमण्डल ईश्वर का ही स्वरुप है।

यहाँ पर श्रुति ने उत्तम अधिकारी को साक्षात् ब्रह्म दृष्टि का उपदेश दिया है। इसी प्रकार की परमार्थ दृष्टि दृढ़ करने के लिए श्रुति साधन बताते हुए कह रही है की

www.OmShreeMadhavanandji.org

'उनका त्यागपूर्वक पालन करें' अर्थात् उस ब्रह्म दृष्टि का पुत्रैषणा, वित्तैषणा, और लौकेषणा आदि कामनाओं के त्याग से ही पालन किया जा सकता है। **'न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्त्वमानशुः'** इत्यादी अन्य श्रुति की प्रसिद्धी से भी मुमक्षु को उक्त ऐषणाओं का त्याग परम आवश्यक है। मुमुक्षु को नियमविधि बताते हुए श्रुति कह रही है की भिक्षा वस्त्र धनादि की आकांक्षा न करते हुए **'यदृछा लाभ संतुष्टः'** इस स्मृति के अनुसार यथामिलित वस्तु से ही संतुष्ट रहे।।१।।

यह जो धन के इच्छुक हैं और ब्रह्म का साक्षात्कार करने में असमर्थ हैं उनके लिए त्याग कष्टदायी मानते हुए श्रुति अगले मंत्र में कर्म में अधिकार बता रही है-

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ꣳ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।। २ ।।

अन्वय :- इह कर्माणि कूर्वन् ऐव शतम् समाः जिजीविषेत् एवम् त्वयि नरे कर्म न लिप्यते इतः अन्यथा (साधनान्तर) न अस्ति।

www.OmShreeMadhavanandji.org

अन्वयार्थ :-

इह : इस लोक में
कर्माणि : (वेद विहित) कर्मों को
कुर्वन् : करते हुए
एव : ही
शतम् : सौ
समाः : वर्ष (तक)
जिजीविषेत् : जीने की इच्छा करें।
एवम् : इस प्रकार
त्वयि : कर्म अधिकारी
नरे : नर के लिए
कर्म : (अशुभ) कर्म (का)
लिप्यते : लेप
न : न हो (ऐसा)
इतः : इससे
अन्यथा : भिन्न (प्रकार)
न अस्ति : नहीं है

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- इस कर्म प्रधान विश्व में अथवा इस मनुष्य शरीर में मंद अधिकारी को चाहिए की वह वेद विहित नित्य, नैमित्तिक, ईष्ट, पूर्त, दत्त, अग्निहोत्र इत्यादि कर्म निष्काम भाव से करते हुए ही परम्परा से प्राप्त सौ वर्ष पर्यन्त जीने की इच्छा करें। क्योंकि मनुष्य का स्वभाव है कि वह कुछ न कुछ करता रहता है। अतः वेद निषिद्ध स्वाभाविक कर्म भी हो सकता है उसके फल स्वरुप जन्म मरण बना रहता है। ऐसे व्यक्ति को भी जन्म

www.OmShreeMadhavanandji.org

मरण से छुटकारा दिलाने के उद्देश्य से श्रुति यावद् आयु वेद विहित कर्म करने का आदेश दे रही है इससे भिन्न मनुष्य को पाप कर्म से छुटने का कोई उपाय नहीं है। जिससें की अशुभ पाप कर्म का लेप न हो।। २।।

जो ज्ञानी भी नहीं है और कर्मी तथा उपासक भी नहीं है केवल पशुवत् जिसका जीवन है। ऐसे अज्ञानी की निंदा अगले मंत्र में श्रुति कर रही है-

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
ताꣳस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।। ३ ।।

अन्वय :- असूर्या नाम लोकाः ते अन्धेन तमसा आवृताः ये के च आत्महनः जनाः तें प्रेत्य तान् अभिगच्छन्ति।

अन्वयार्थ :-.

असूर्या : असूर सम्बन्धी
नाम : (अनर्थक निपात)
लोकाः : (जो) लोक (है)
ते : वह लोक
अन्धेन : अदर्शनात्मक
ये के च : जो कोई भी
आत्महनः : आत्मघाती (अज्ञानी मनुष्य)
जनाः : मनुष्य (है)
ते : वह

www.OmShreeMadhavanandji.org

तमसा : अज्ञान से
आवृताः : ढके हुए हैं।
प्रेत्य : मृत्यु के बाद
तान् : उन (असुर सम्बन्धी लोक में
अभिगच्छन्ति : गमन करते हैं।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- उक्त मंत्र के द्वारा श्रुति आत्मज्ञान शून्य जीव की निंदा कर रही है। इसका तात्पर्य निंदा अर्थ में नहीं है किंतु ज्ञान की महत्ता के लिए है। श्रुति कह रही है कि असुर सम्बन्धी जो प्रसिद्ध लोक है। वह अदर्शनात्मक अज्ञान रूप अंधकार से व्याप्त है। आत्मा के यथार्थ स्वरुप को न जानने वांले आत्मघाती मनुष्य अज्ञान के फल स्वरुप मरण के पश्चात उन असुर सम्बन्धी लोक को प्राप्त करते हैं।

इस मंत्र में भाष्यकार 'लोक' शब्द का अर्थ 'शरीर' करते हैं, तदनुसार अर्थ हुआ की आत्मा की सत्ता सर्वत्र विद्यमान होते हुए भी अज्ञान के फलस्वरुप उन सत्ता का अनुभव न करने के कारण मनुष्य मरण के पश्चात नीच योनियों को प्राप्त करते हैं। क्योंकि आत्मा की सत्ता का

www.OmShreeMadhavanandji.org

अनुभव न करना ही आत्मघात है। सनत्सुजातीय संहिता में कहा गया है की **'योऽन्यथा सन्तमात्मानमन्यथा प्रतिपद्यते। किं तेन न कृतं पापं चौरेणात्मापहारिणा।।'** अर्थात जो आत्मा की वास्तविकता को नहीं जानता उस आत्मघाती मनुष्य ने कौन सा पाप नहीं किया ? क्योंकि वह अविनाशी आत्मा की अज्ञानजन्य देहाभिमान के कारण हिंसा कर रहा है। अतः वे अज्ञानी मनुष्य जन्म मरण के चक्कर में घूमता रहता है। अतः मनुष्य को चाहिए की वह वर्तमान शरीर रहतें हुए ही आत्मा को जानने का प्रयत्न करें।।३।।

जिस आत्मा के अज्ञान से अज्ञानी अन्धकारमय लोक को प्राप्त करते हैं और आत्मज्ञानी मुक्त हो जाते हैं वह आत्मतत्त्व किस प्रकार का है? ऐसी आशंका होने पर श्रुति चतुर्थ मंत्र में आत्मा का स्वरूप बता रही हैं-

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवाप्नुवन्पूर्वमर्षत्। तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति।। ४।।

www.OmShreeMadhavanandji.org

अन्वयः- अनेजत् एकं मनसः जवीयः एनत् देवा न आप्नुवन् पूर्वम् अर्षत् तत् धावतः अन्यान् अत्येति तिष्ठत् तस्मिन् मातरिश्वा अपः दधाति।

अन्वयार्थः

अनेजत् : चलन रहित
एकम् : एक
मनसः : मनसेभी
जवीय : द्रुतगामी है।
एनत् : इस परमेश्वर को
देवाः : चक्षुरादि इन्द्रियाँ
न : नहि
आप्नुवन् : जान सकती।
पूर्वम् : (क्योंकि) वह पहले से ही
अर्षत् : प्राप्त ही है।
तत् : प्रकृत आत्मतत्त्व
धावतः : तेज चलने वाले
अन्यान् : काल वायु आदि का
अत्येति : उल्लंघन कर जाता है।
तिष्ठत् : (फिर भी) स्थिर रहता है।
तस्मिन् : आत्मतत्त्व की सत्ता से ही
मातरिश्वाः : हिरण्यगर्भ
अपः : अग्निहोत्रांदि कर्म
दधाति : स्थापित करने में समर्थ होता है।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- प्रकृत परमेश्वर पारमार्थिक निरुपाधिक रूप से चलन रहित होते हुए भी औपाधिक

www.OmShreeMadhavanandji.org

रूप से मन से भी तीव्रगामी है। अतः विरोध को स्थान नहीं है। इस परमेश्वर को, जैसे मन में स्थित परिमाण मन के द्वारा ग्रहण नहीं किया जा सकता अथवा चक्षु में स्थित वर्तमान अंजन को चक्षु के द्वारा ग्रहण नहीं किया जा सक्ता अत्यन्त समीप होने से। उसी प्रकार मन,चक्षुरादि इन्द्रियों में आत्मतत्त्व अनुगत होने से मन आदि इन्द्रियां आत्म तत्त्व को नहीं जान सकती ऐसा भाव है।

मनादि से प्राप्त नहीं कर सकने के कारण आत्मा कि असत्ता की शंका का निवारण करते हुए श्रुति कहती है **'पूर्वमर्षत्'** अर्थात मन आदि इन्द्रियां जहां पर पहुंचती है वहां पर तो वह पहले से व्यापक होने के कारण विराजमान है। आत्मा कि व्यापकता में हेतु बताते हैं कि वह तेजी से चलने वाले काल वायु आदि का भी उल्लंघन कर जाता है। अर्थात् पहले से हि स्वयं अविक्रिय होता हुआ वहां पर स्थित है।

.प्रकृत आत्म तत्त्व कि सत्ता से हि हिरण्यगर्भ सोम, आज्य जल दूध इत्यादि से सम्पादित होने वाले श्रौत अग्निहोत्र आदि कर्म सम्पादित कर सकने में समर्थ होता

www.OmShreeMadhavanandji.org

है अथवा अग्नि आदित्य वरुण आदि देवता अपना नियत किया गया कर्म जैसे ज्वलन, वहन, प्रकाश, वृष्टि आदि नियत रूप से करते हैं अन्यथा अधिष्ठाता के बिना नियत प्रवृत्ति हो नहीं सकती। अतः आत्मतत्त्व की सत्ता का स्वीकार सर्वत्र करना पड़ता है। ।। ४।।

ब्रह्म कि सर्व व्यापकता का वर्णन श्रुतिः पुनः प्रकारान्तर से करती है-

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ।।५।।

अन्वयः- तत् एजति तत् न ऐजति तत् दुरे तत् उ अन्तिके तत् अस्य सर्वस्य अन्तः तत् उ सर्वस्य अस्य बाह्यत ।

अन्वयार्थः

तत् : वह आत्मतत्त्व
एजति : चलता है।
तत् : वह आत्मतत्त्व
न एजति : नहि भी चलता।
तत् : वह आत्मतत्त्व
अस्य : इस
सर्वस्य : सम्पूर्ण प्राणी जगत के
अन्तः : अन्दर भी है।

www.OmShreeMadhavanandji.org

तत् : वह आत्मतत्त्व
दुरे : दुर भी है।
तत् : वह आत्मतत्त्व
उ अन्तिके : समीप भी है।

तत् : वह आत्मतत्त्व
अस्य : इस
उ सर्वस्य : सम्पूर्ण प्राणी जगत के
बाह्यतः : बाहर भी है।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- ब्रह्मरूप आत्मतत्त्व वायु आदि उपाधि के कारण चलता है और वही आत्म तत्त्व निरूपाधिक रूप से नहीं भी चलता, क्योंकि स्वरूप से वह अविक्रिय है। वही आत्मतत्त्व अज्ञानी के लिए दूर है, क्योंकि अज्ञान के कारण नजदीक होने पर भी नहीं देख सकता और विद्वान के लिए अत्यन्त समीप है क्योंकि विद्वान के द्वारा आत्मतत्त्व को प्रत्यग्रुप से जान लिया गया है । वही आत्मतत्त्व सम्पूर्ण दृश्यमान चराचर विश्व के अन्दर भी है। क्योंकि जगत आत्मा से ही उत्पन्न होने के कारण गहने में स्वर्ण कि तरह सम्पूर्ण जगत में आत्मतत्त्व विद्यमान है। वह आत्म तत्त्व निरूपाधिक रूप से किसी का भी कारण न होने से पारमार्थिक रूप से किसी में भी लेपायमान नहीं होता। अतः सम्पूर्ण प्राणी जगत से वह भिन्न होने से 'बाहर भी है' ऐसा कह दिया गया।

www.OmShreeMadhavanandji.org

अभिप्राय यह है कि सम्पूर्ण दृश्यमान प्रपञ्च में ब्रह्म विद्यमान है।।५।।

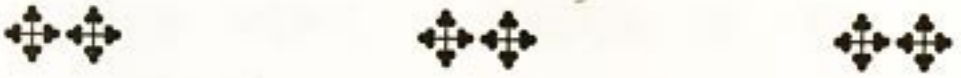

श्रुति आत्मा के ज्ञान का फल बता रहि है-

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते।।६।।

अन्वयः- यः तु सर्वाणि भूतानि आत्मनि एव अनुपश्यति च सर्वभूतेषु आत्मानम् ततः न विजुगुप्सते।

अन्वयार्थः

यः तु : यह जो विद्वान्
सर्वाणि : सर्व,
भूतानि : प्राणी समुदाय को
आत्मनि : आत्मा में
एव : हि (भेद रहित)
अनु : साक्षात्
पश्यति : देखते है।
च : और
सर्वभूतेषु : सभी प्राणी समुदाय में
आत्मानम् : आत्मा को (देखता है)
ततः : उससे (वह विद्वान् किसी की)
न विजुगुप्सते : निन्दास्तुति नहि करता।

www.OmShreeMadhavanandji.org

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- जिस विद्वान को आत्मा का अभेद ज्ञान हो गया है। वह ब्रहमा से लेकर स्तम्ब पर्यन्त के जितने भी प्राणी समुदाय है उन सबमें अपने स्वरूप को ही देखता है। अर्थात मेरे से कोई भिन्न नहीं है और उक्त सभी प्राणियों में मैं ही अवस्थित हूँ ऐसा साक्षात्कार कर लेता है। वह विद्वान उक्त अभेदज्ञान के फलस्वरूप किसी का भी राग़द्वेष निन्दा स्तुति नहीं करता, क्योंकि अपने से भिन्न किसी को देखता ही नहीं तो निन्दास्तुति करेगा किसकी? अर्थात् भेदज्ञान में ही निन्दास्तुति रागद्वेष होता है। अभेद ज्ञान के पश्चात सर्वत्र ब्रह्म दर्शन ही हो जाता है। लोक में अन्य को अपने से भिन्न समझने से ही लड़ाई झगडा रागद्वेष आदि विकार होता है। अतः सर्वत्र ब्रह्म दर्शन का अभ्यास करना चाहिए।।६।।

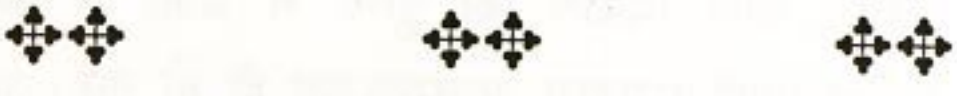

इस मंत्र में पुनः आत्मज्ञान का फल श्रुति बता रही है:-

www.OmShreeMadhavanandji.org

यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः।।७।।

अन्वयः- यस्मिन् विजानतः सर्वाणि भूतानि आत्मा एव अभूत् तत्र एकत्त्वम् अनुपश्यतः कः मोहः कः शोकः।

अन्वयार्थः

यस्मिन् : जिस काल में
विजानतः : ज्ञानी पुरूष के लिए
सर्वाणि : सम्पूर्ण
भूतानि : प्राणी समुदाय
आत्मा : आत्मा
एव : ही
अभूत् : हो गए।
तत्र : उस काल में
एकत्वम् : एकत्त्व को
अनुपश्यतः : देखते हुए (विद्वान को)
कः मोह : क्यों मोह होवें?
कः शोक : क्यों शोक होवें?

तात्पर्यप्रकाशव्याख्याः- जिस अवस्था में अथवा उक्त अभेद ज्ञान अवस्था में परमार्थ वस्तु आत्मा को जानने वाले विद्वान की दृष्टि में ब्रह्मा से लेकर स्तम्ब पर्यन्त प्राणी समुदाय आत्मस्वरूप ही हो गए। अर्थात् सभी भूतों में मैं ही आत्मरूप से विलसित हूँ। उस काल में

www.OmShreeMadhavanandji.org

सर्वत्र विशुद्ध आकाश के समान एकत्त्व दर्शन करने वाले विद्वान को उक्त अभेद ज्ञान के फलस्वरूप कैसे शोक हो सकता है मोह भी कैसे हो सकता है। क्योंकि शोक और मोह रूपी वृक्ष अविद्यारूपी बीज के कारण ही प्रस्फुटित होते है। ज्ञानी की मूलाविद्या की निवृत्ति हो जाने से उनको शोक मोह नहीं होता है। शोक मोह ही संसार है और ज्ञानी की दृष्टि में तो समूल संसार का ही उच्छेद हो गया है।।७।।

उपर्युक्त मंत्रों से जिस आत्मा का वर्णन किया गया है वह आत्मा अपने स्वरूप से कैसे लक्षणों वाला है? ऐसी आकांक्षा होने पर श्रुति आगे के मन्त्र में आत्मा के लक्षण बता रही है-

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरँ शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधा च्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।।८।।

अन्वयः- सः पर्यगात् शुक्रम् अकायम् अव्रणम् अस्नाविरम् शुद्धम् अपापविद्धम् कविः मनीषी परिभूः स्वयम्भू याथातथ्यतः

www.OmShreeMadhavanandji.org

अर्थान् व्यदधात् शाश्वतीभ्यः समाभ्यः।

अन्वयार्थः

स : प्रकृत आत्मतत्त्व
पर्यगात् : व्यापक
शुक्रम् : दीप्तमान्
अकायम् : शरीर रहित
अव्रणम् : क्षति रहित
अस्नाविरम् : शिरा रहित
शुद्धम् : निर्मल
अपापविद्धम् : पाप से रहित
कविः : सर्व दृष्टा
मनीषीः : सर्वज्ञ
परिभूः : सर्वत्र फैला हुआ
स्वयम्भूः : कारण रहित है।
याथातथ्यतः : (उन्होंने)जैसा कर्म वैसा फल के अनुसार
अर्थान् : कर्तव्य पदार्थों का
व्यदधात् : विभाग किया।
शाश्वतीभ्यः : नित्यसिद्ध के लिए।
समाभ्यः : प्रजापति के लिए।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- प्रकृत आत्मतत्त्व व्यापक है। सर्व पदार्थ में अनुगत है। दीप्तिमान् है। 'अकायम्' शब्द से श्रुति का अभिप्राय लिंग शरीर से रहित है। अव्रण अर्थात् जिसमें किसी भी प्रकार का छिद्र विशेष नहीं है और अस्नाविर यानि कि स्नायु रहित, यहाँ पर

www.OmShreeMadhavanandji.org

'अव्रण' और 'अस्नाविर' शब्द से श्रुति का अभिप्राय है कि आत्मा स्थूल शरीर से रहित है। शुद्ध है अर्थात अविद्यारूपी मल से रहित है, इस विशेषण से श्रुति द्वारा कारण शरीर का खण्डन किया गया। आत्मा अपापविद्ध है अर्थात् पाप से ग्रस्त नहीं है। भाष्यकार ने 'पाप' शब्द से धर्म व अधर्म दोनों को ग्रहण किया गया है अर्थात् आत्मा पाप-पुण्य से रहित है। आत्मा सर्वदृष्टा है, और अनेक रूप से चारों और फैला हुआ है। स्वयम्भू है, जिसका कोई कारण नहीं है आत्मा ही सबका कारण है। तथा सनातन काल से सभी प्राणियों के लिए कर्म और फल का विभाग करता है तथा समस्त साध्य साधन आदि के नियत स्वरूप का निर्धारण तथा चेतन-अचेतन रूप पदार्थों की विविध रूप से कल्पना आत्मा के द्वारा होती है।।८।।

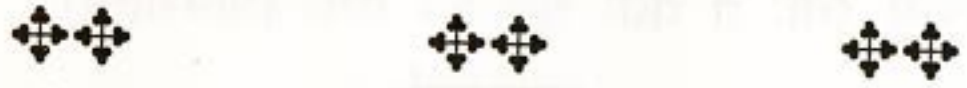

'ईशावास्यम्' इत्यादि मंत्र के द्वारा सूत्र रूप से बतायी गयी ज्ञाननिष्ठा का प्रकरण आठवें मंत्र तक समाप्त हो गया। अब यहाँ से उक्त आत्मतत्त्व का अपरोक्ष अनुभव करने में असमर्थ है और संसार में अत्यधिक आसक्त होने से जिसका सन्यास में भी अधिकारी नहीं है

www.OmShreeMadhavanandji.org

उन कनिष्ठ मुमुक्षु के लिए **'कुर्वन्नेवेह कर्माणि'** इत्यादि मंत्र से सूत्र रूप से बतायी गयी कर्मनिष्ठा का वर्णन करते हुए श्रुति मुमुक्षु को कर्म और उपासना का साथ-साथ अनुष्ठान करवाने की इच्छा से एक-एक के अनुष्ठान कि निन्दा करती है। ध्यान रहे कि यहां पर निन्दा मात्र उक्त कर्म और उपासना का एक साथ अनुष्ठान करवा करके क्रम मुक्ति रूप फल प्राप्त करवाने के अभिप्राय से है।

केवल अविद्या (कर्म) तथा केवल विद्या (उपासना) के अनुष्ठान की निन्दा अगले मंत्र में करते हैं-

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्याया ँ रताः।।९।।

अन्वयः- ये अविद्याम् उपासते ते अन्धन्तमः प्रविशन्ति ये विद्यायाम् रताः ते ततः भूय इव तमः (प्रविशन्ति)

अन्वयार्थः

ये : जो (मनुष्य)
अविद्याम् : कर्म का
उपासते : अनुष्ठान करते है
ये : जो (मनुष्य)
विद्यायाम् : उपासना में
रताः : तत्पर है।

www.OmShreeMadhavanandji.org

ते : वह	***ते*** : वह (मनुष्य)
अन्धन्तमः : अन्धकारमय संसार (को)	***भूयइव*** : (मानो) अधिक तर ***तमः*** : अन्धकारमय संसार को (प्राप्त करते है)
प्रविशन्ति : प्राप्त करते हैं।	

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या- जो अविद्वान् मनुष्य विद्या को छोड़कर केवल अविद्या अर्थात् ज्योतिष्टोमादि लक्षण कर्म का ही अनन्य चित होकर अनुष्ठान करता है वह मनुष्य अहं मम अभिमान ही जिसका स्वरूप है ऐसे अन्धकारमय संसार को प्रकृष्ट रूप से प्राप्त करते है क्योंकि केवल कर्म का फल पूण्य भोगकर फिर **'क्षीणेपुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति'** इस स्मृति के अनुसार पुनः संसार को ही प्राप्त करते है।

जो अविद्वान मनुष्य अविद्या (कर्म) को छोड़कर केवल विद्या (उपासना) के अनुष्ठान में तत्पर है, वह देवता उपासक उपरोक्त अन्धकारमय संसार से भी अधिकतर अदर्शनात्मक संसार को प्राप्त करते है। क्योंकि देव उपासना के फल स्वरूप प्राप्त होने वाली एश्वर्य आदि सिद्धि में आसक्त होने का डर बना रहता है अतः ये वास्तव में अधिक अन्धकारमय अवस्था ही है।।९।।

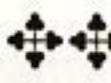

www.OmShreeMadhavanandji.org

उपरोक्त मंत्र में कर्म और उपासना कि निन्दा करने से उनके अलग-अलग फल के अभाव कि शंका हो जाती है अतः श्रुति दोनों का फल भेद बता रही है-

अन्यदेवाहुर्विद्ययाऽन्यदाहुरविद्यया।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।१०।।

अन्वयः- विद्यया अन्यत् एव (फलम्) आहुः, अविद्यया अन्यत् आहुः इति धीराणाम् (वचन) शुश्रुम ये नः तत् विचचक्षिरे।

अन्वयार्थः

विद्यया : उपासना से
अन्यत् : दुसरा
एव : हि
आहु : (फल) कहा गया है
अविद्यया : कर्म से
अन्यत् : दूसरा ही
आहु : (फल) कहा गया है।
इति : इस प्रकार के
धीराणाम् : वेद विदो के(वचन)
शुश्रुम : हमने सुना है
ये : जिन्होंने
न : हम लोगो के लिए
तत् : उन विषय कि
विचचक्षिरे : व्याख्या की थी।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या- विद्या शब्द का अर्थ यहां

www.OmShreeMadhavanandji.org

पर उपासना होने से अर्थ हुआ कि केवल देवताओं कि उपासना के द्वारा **'विद्यया देव लोकः'** इस श्रुति के अनुसार देवयान मार्ग के द्वारा देवलोक (ब्रह्मलोक) हि फल कहा गया है। तथा अविद्या शब्द का अर्थ कर्म होने से अर्थ हुआ कि ज्योतिष्टोम आदि कर्म के द्वारा **'कर्मणा पितृलोकः'** इस श्रुति के अनुसार पितृलोक (स्वर्ग लोक) ही फल कहा गया है। इस प्रकार दोनों के फल का पृथक्करण रूप व्याख्यान हमारे लिए वेद का अर्थ जानने वाले विद्वान के द्वारा किया गया है।।१०।।

इस प्रकार उपरोक्त मंत्र के द्वारा कर्म और उपासना का फल सहित निरुपण करके अब उन दोनों के साथ-साथ अनुष्ठान करने से अपेक्षित क्रममुक्ति रूप फल बता रहे हैं-

विद्याञ्चाविद्याञ्च यस्तद्वेदोभय ꣳ सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।। ११।।

www.OmShreeMadhavanandji.org

अन्वयः- यः विद्याम् च अविद्याम् च तद् उभयम् सह वेद, सः अविद्यया मृत्युम् तीर्त्वा विद्यया अमृतम् अश्नुते।

अन्वयार्थः-

यः : जो मनुष्य,	*स* : वह
विद्याम् : उपासना	*अविधया* : कर्म के द्वारा
च : और	*मृत्यृम्* : वेद निषिध्द स्वाभाविक
अविद्याम् : कर्म	कर्म और विद्या का
च : का	*तीर्त्वा* : अतिक्रमण करके
तद् : इन	*विद्यया* : उपासना के द्वारा
उभयं : दोनों का	*अमृतम्* : देवतात्मभाव को
सह : एक साथ	*अश्नुते* : प्राप्त कर लेता
वेद : अनुष्ठान (करता है)	है।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- जो अंधिकारी मनुष्य विद्या अर्थात् देवता की उपासना को और अविद्या अर्थात् अग्निहोत्रादि कर्म इन दोनों का एक साथ अनुष्ठान करने से समष्टिभाव अर्थात् क्रममुक्ति की प्राप्ति होती है यह रहस्य को जानकर के एक साथ अनुष्ठान करता है। वह मनुष्य अविद्या अर्थात् अग्निहोत्रादि कर्म के द्वारा स्वाभाविक

www.OmShreeMadhavanandji.org

ज्ञान और कर्मरूप मृत्यु का अतिक्रमण करके विद्यया अर्थात् देवता की उपासना के द्वारा अमृतम् अर्थात् देवता के स्वरूप को प्राप्त कर लेता है।। ११।।

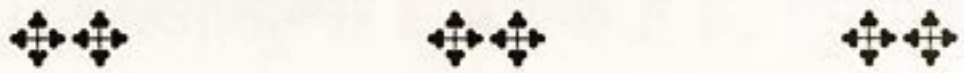

शुद्ध अंतःकरण वाले विरक्त संन्यासी के लिए 'इशावास्यमि'त्यादी मंत्र के द्वारा ब्रह्मात्मैकत्त्व विद्या कही गई और अशुद्ध अंतःकरण वाले मुमुक्षु को भी ज्ञान का अधिकार प्राप्त हो इसलिए श्रुति ने 'कुर्वन्नेवेहि' त्यादि मंत्र के द्वारा सुत्र रूप से कही गई कर्मनिष्ठा का प्रकरण 'अंधन्तमः' इत्यादि मंत्र के द्वारा आरम्भ किया। उनमें जो मुमुक्षु का अंतःकरण मल और विक्षेप इन दोनों प्रकार की अशुद्धि से ग्रस्त है। उनके लिए शीघ्र फल का लाभ हो इसलिए श्रुति ने कर्म और उपासना के समुच्य का विधान किया।

किन्तु जिस मुमुक्षु का अंतःकरण केवल विक्षेप दोष से ही मलीन है। उनको शीघ्र फल की प्राप्ति होवे इसलिए व्याकृत और अव्याकृत उपासना के समुच्चय का विधान करना इष्ट होने से श्रुति इन दोनों उपासनाओं के

www.OmShreeMadhavanandji.org

पृथक-पृथक अनुष्ठान की निंदा आगे के मंत्र से कर रही है -

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्याꣳरताः।। १२।।

अन्वयः- ये असम्भूतिम् उपासते ते अन्धन्तमः प्रविशन्ति ये उ सम्भूत्याम् रताः ते ततः भूय इव तमः (प्रविशन्ति)।

अन्वयार्थः

ये : जो मनुष्य,
असम्भुतिम् : असम्भूति की
उपासते : उपासना करता है
ते : वह
अन्धन्तमः : घोर अंधकार में
प्रविशन्ति : प्रवेश करता है

ये उ : जो मनुष्य
सम्भूत्याम् : सम्भूति कि उपासना में
रताः : रत है
ततः : (वह मानो) उससे भी
भूयइव : अधिकतर
तमः : घोर अंधकार में
(प्रवेश करता है)

तात्पर्यप्रकाश व्याख्याः- जो अज्ञानी मनुष्य 'असम्भुति' अर्थात् अव्याकृत रूप से कही जाने वाली जगत्कारणरुपा प्रकृति की उपासना करता है 'जगत की

www.OmShreeMadhavanandji.org

कारण रुप प्रकृति मैं हूँ' ऐसा निरंतर जो ध्यान करता है वह उपासक अहम् मम अभिमानरुप अदर्शनात्मक घोर अंधकारमय संसार को ही प्राप्त करता है। इससे भिन्न जो मनुष्य सम्भुति की अर्थात् व्याकृत रुप से कही जाने वाली कार्यरुप हिरण्यगर्भ की उपासना में ही रत है वह उपासक पूर्वोक्त प्रकार के अंधकारमय संसार से भी अधिकतर अहम् मम अभिमान रुप संसार को प्राप्त करता है।।१२।।

अब आगे के मंत्र में पूर्वोक्त सम्भुति (व्याकृत) और असम्भुति (अव्याकृत) इन दोनों उपासनाओं का पृथक-पृथक फल बताया ज़ा रहा है-

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।। १३।।

अन्वयः- सम्भवात् अन्यत् आहुः असम्भवात्अन्यत् आहुः इति धीराणाम् (वचन) शुश्रुम ये नः तत् विचचक्षिरे

अन्वयार्थः

सम्भवात् : संभूति की उपासना से *इति* : ऐसा

अन्यत् : दूसरा ही *धीराणाम्* : विद्वानों का (वचन)

www.OmShreeMadhavanandji.org

आहुः : (फल) कहा गया है।
असम्भवात् : असंभूति की उपासना से
अन्यत् : दूसरा ही
आहुः : (फल) कहा गया है।
शुश्रुम : (हमने) सुना है।
ये : जिसने
नः : हमारे लिए
तत् : उनकी
विचचक्षिरे : व्याख्या की थी।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्याः- सम्भूति का अर्थ पूर्वोक्तं मंत्र में कार्यब्रह्म हिरण्यगर्भ किया गया है अतः अर्थ हुआ की कार्यब्रह्म की उपासना से अणिमादी ऐश्वर्य की प्राप्ति रूप फल मनीषियों ने बताया है और असंभूति यानी की अव्याकृत प्रकृति की उपासना से प्रकृतिलयलक्षण रूप फल बताया है ऐसा हमने वेद का अर्थ जानने वाले विद्वानों के द्वारा सुना है जिन्होंने हमारे लिए उक्त दोनों उपासनाओं की व्याख्या की थी। उन्होंने भी यह उपदेश आचार्य परम्परा से ही प्राप्त किया था अतः उक्त विषय में अप्रमाण की आशंका नहीं करनी चाहिए।। १३।।

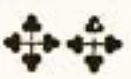

उक्त दोनों उपासनाओं का अलग-अलग फल होने के कारण तथा दीर्घकाल तक ऐश्वर्यसुखभोगपूर्वक दुःख

www.OmShreeMadhavanandji.org

का अभाव रूप पुरुषार्थ का कारण होने से भी दोनों उपासनाओं का साथ-साथ अनुष्ठान कराना ही श्रुति को इष्ट है। यह बात आगे के मंत्र में कही जा रही है-

सम्भुतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयꣳसह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वाऽसंभूत्याऽमृतमश्नुते।। १४।।

अन्वयः- यः असम्भुतिम् च विनाशम् च तद उभयम् सह वेद (स) विनाशेन मृत्युम् तीर्त्वा असम्भूत्या अमृतम् अश्नुते।

अन्वयार्थः

यः : जो
असंभूतिम् : असंभूति
च : और
विनाशम् : संभूति
च : को भी
तद् : उक्त
उभयम् : दोनों को
सह : साथ-साथ
वेद : जानता है (उपासना करता है)
विनाशेन : (वह) संभूति की उपासना से
मृत्युम् : मृत्यु का
तीर्त्वा : अतिक्रमण करके
असंभूत्या : असंभूति के द्वारा
अमृतम् : (प्रकृतिलय रुप) अमृत को
अश्नुते : प्राप्त कर लेता है।

www.OmShreeMadhavanandji.org

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- यद्यपि उपरोक्त मंत्र के आदि में 'संभूति' पद का पाठ है तथापि वहाँ पर अकार का लोप होने से 'असंभूति' पद समझना चाहिए। क्योंकि तेरहवें मंत्र में संभूति पद से जिसको कहा गया है उन्हीं को इस मंत्र में 'विनाश' पद से कहा गया है। अतः मंत्र के शुरु में पड़ा हुआ 'संभूति' पद का अर्थ 'असंभूति' करना युक्ति संगत है।

जो मनुष्य 'असंभुति' अर्थात् अव्याकृत कारण प्रकृति की, तथा 'विनाशम्' यानि की कार्यब्रह्म हिरण्यगर्भ की उपासना एक साथ करता है वह विनाश शब्द से कहे गये कार्यब्रह्म हिरण्यगर्भ की उपासना के द्वारा अधर्म अनैश्वर्य तथा कामादि दोष रुप मृत्यु का अतिक्रमण कर लेता है क्योंकि हिरण्यगर्भ की उपासना से अणिमादी ऐश्वर्य की प्राप्ति रुप फल मिलता है। और असंभूति की उपासना के द्वारा प्रकृतिलय रूप अमृतत्व को प्राप्त कर लेता है।

यद्यपि केवल असंभूति की उपासना का फल भी प्रकृतिलय और दोनों की साथ-साथ उपासनाओं का फल भी प्रकृतिलय यहाँ पर बताया है तथापि विक्षेपमात्र अशुद्ध

www.OmShreeMadhavanandji.org

अंतःकरण वाले मुमुक्षु को शीघ्र फल की प्राप्ति हो जाये इसलिए यहाँ पर दोनों उपासनाओं का साथ-साथ अनुष्ठान बताया गया है।। १४।।

पूर्व मंत्र में जिस अमृतत्त्व की बात बताई है वह अमृतत्त्व जिस मार्ग से प्राप्त होता है उस मार्ग के अभिमानी देवता की प्रार्थना आगे के मंत्र में करते हैं।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।। १५।।

अन्वयः- (हे) पूषन् सत्यस्य मुखम् हिरण्मयेन् पात्रेण अपिहितम् तद् त्वम् सत्यधर्माय दृष्टये अपावृणु

अन्वयार्थः

(हे) पूषन् : (हे जगत के) पोषक
सत्यस्य : सत्य का
मुखम् : द्वार
हिरण्मयेन : स्वर्णमय
पात्रेण : (आवरण रुप)पात्र से
अपिहितम् : ढका हुआ है।
तद् : उसको
त्वम् : आप
सत्यधर्माय : (मुझ) सत्य धर्मा जिज्ञासु के लिए
दृष्टये : (उस अमृतत्त्व की) प्राप्ति के लिए
अपावृणु : हटा लिजिए।

www.OmShreeMadhavanandji.org

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- आदित्य मंडलस्थ अभिमानी समष्टी देवता ही कर्म और उपासना के साथ-साथ अनुष्ठान के द्वारा प्राप्त करने योग्य है। उनके साथ एकाकार होना ही पूर्वमंत्र में अमृतत्त्व बताया है। अतः आदित्यमण्डल में स्थित अभिमानी देवता की प्रार्थना करते हुए जिज्ञासु कहता है की हे जगत के पोषण करने वाले सूर्य देवता मुझ सत्य धर्मा को अमृतत्त्व की प्राप्ति हो जाय तदर्थ आप स्वर्णपिंड सदृश दिप्तीमान उन पात्र रुप आवरण को हटा लिजिए ताकि मैं उन समष्टि देवता के साथ एकाकार हो जाऊँ। यहाँ पर व्यष्टिभाव छोड़कर समष्टिभाव को प्राप्त करना ही इष्ट है।

सत्य की उपासना करने के कारण सत्य का धर्म आरोपित करके मुमुक्षुं अपने को सत्यधर्मा बता रहे है। अथवा 'सत्यधर्मा' समष्टि देवता का विशेषण भी हो सकता है।। १५।।

आदित्यमण्डलस्थ समष्टि देवता की प्रार्थना पुनः आगे के मंत्र में करते हैं।

www.OmShreeMadhavanandji.org

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मीन्समूह।
तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि।। १६।।

अन्वयः- पूषन् एकर्षे यमः सूर्य प्राजापत्य तेज रश्मिन् समूह व्यूह यत् ते कल्याणतमम् रुपम तद् ते पश्यामि यः असौ सः असौ अहम् अस्मि।

अन्वयार्थः

पूषन् : (हे) जगत के पोषक
एकर्षे : (हे) अकेले चलने वाले
यमः : (हे) यमन करने वाले
सूर्य : (हे) सूर्य
प्राजापत्य : (हे) प्रजापति के पुत्र
तेज : प्रदिप्त
रश्मिन् : किरणों के
समूह : समूह को
व्यूह : खिंच लीजिए।
यत् : जो
ते : आपका
कल्याणतमम् : अत्यन्त कल्याणकारी
रुपम् : जो रुप है
तद् : उक्त
ते : आप का रुप
पश्यामि : मैं देख सकूँ।
यः : यह
असौ : जो (परोक्ष) आदित्यमण्डलस्थपुरुष (है)।
सः : वह
असौ : (प्रत्यक्ष) आदित्यमण्डलस्थपुरुष

www.OmShreeMadhavanandji.org

अहम् : मैं
अस्मि : हूँ।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- हे सब का पोषण करने वाले! हे अकेले गमन करने वाले! है सब का नियमन करने वाले! हे सर्व कर्मो के प्रवर्तक! हे प्रजापति के पुत्र आप अपनी प्रदिप्त किरणों के समूह को अपने में समेट लीजिए ताकी मैं आपका जो प्रसिद्ध ज्योतिःस्वभाव अतिशय कल्याणकारी आनन्द रुप आप के प्रसाद से साक्षात्कार कर सकूँ। मैं आपसे नौकर की तरह याचना नहीं कर रहा हूँ किन्तु आपके रूप को प्राप्त करने का मेरा अधिकार है क्योकि आप का जो प्रसिद्ध आदित्यमण्डलस्थ रूप है, वह सर्वत्र परिपूर्ण रूप मेरा भी है अतः जैसे दूध में दूध मिल जाता है वैसे मैं भी आप में एकाकार हो जाउँ यह भाव है।। १६।।

मरणकाल में मुमुर्षु को कैसा चिन्तन करना चाहिए? इस बात को श्रुति बता रही है -

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तꣳशरीरम्।
ॐ क्रतो स्मर कृतꣳस्मर क्रतो स्मर कृतꣳस्मर।।१७।।

www.OmShreeMadhavanandji.org

अन्वयः- वायुः अनिलम् अमृतम् अथ इदम् शरीरम् भस्मान्तम् ॐ क्रतो स्मर क्रतम् स्मर क्रतो स्मर क्रतम् स्मर।

अन्वयार्थः

वायुः : (मेरा) प्राण
अनिलम् : सर्वात्मक वायु
अमृतम् : सुत्रात्मा(को प्राप्त हो जाय)
अथ : उसके बाद
इदम् : यह
शरीरम् : स्थूल शरीर
भस्मान्तम् : भस्म हो जाए
ॐ : ओंकार (अभिन्न)
क्रतो : (हे) यज्ञ स्वरुप आदित्य
स्मर : मेरा स्मरण करें।
कृतम् : (मेरे द्वारा अनुष्ठित) ज्ञान और कर्म
स्मर : (का) स्मरण करें।
ॐ : ओंकार (अभिन्न)
क्रतो : (हे) यज्ञ स्वरुप आदित्य
स्मर : मेरा स्मरण करें।
कृतम् : (मेरे द्वारा अनुष्ठित) ज्ञान और कर्म
स्मर : (का) स्मरण करें।

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- मुमुक्षु मरणकाल में स्मरण करें की अब मेरा व्यष्टी रुप आध्यात्मिक वायु, समष्टि रुप आधिदैविक सूत्रात्मा को प्राप्त हो जाए अर्थात् वायु उपलक्षित यह मेरा लिंग शरीर का उत्क्रमण हो जाए।

www.OmShreeMadhavanandji.org

उसके बाद यह मेरा स्थूल शरीर अग्नि में आहूत होके भस्म हो जाए।

हे ओंकार के द्वारा वाच्य ईश्वराभिन्न यज्ञ स्वरुप आदित्य देवता मेरा स्मरण कीजिए। मैं आपका उपासक हूँ। मेरे द्वारा अनुष्ठान किये गये ज्ञान और कर्म का आप स्मरण कीजिए अथवा हे संकल्प विकल्पात्मक मन बाल्यावस्था से लेकर अद्यावधि पर्यन्त किये गये कर्म का स्मरण कर। **ॐ क्रतोस्मर कृतमस्मर** यह दोबारा कथन आदर के लिए कहा गया है।। १७ ।।

उपरोक्त मंत्र में उपास्य देवता की प्रार्थना करके सुमार्ग की प्राप्ति के लिए कंर्म के साधनभूत देवता की प्रार्थना अगले मंत्र में करते है —

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम।।१८।।

इति ईशावास्योपनिषत् सम्पूर्णा।।

अन्वय :- (हे) अग्ने अस्मान् राये सुपथा नय (हे) देव

www.OmShreeMadhavanandji.org

विश्वानी वयुनानी विद्वान्, अस्मत् जुहुराणम् एनः युयोधि ते भूयिष्ठाम् नमः उक्तिम् विधेम।

अन्वयार्थः

अग्ने : (हे) अग्नि देवता
अस्मान् : हमको
राये : फल भोग के लिए
सुपथा : सन्मार्ग से
नय : ले जाइये।
देव : (हे) दीप्तिमान् (आप)
विश्वानि : (हमारे) सम्पूर्ण
वयुनानी : कर्मों को
विद्वान् : जानते हुए
अस्मत् : हमारे
जुहुराणम् : कुटील
ऐनः : पाप कर्मों को
यूंयोधी : नष्ट कर दीजिए।
ते : आपको
भूयिष्ठां : बार-बार
नमःउक्तिम् : नमस्कार वचन (के द्वारा)
विधेम : परिचर्या करते हैं

तात्पर्यप्रकाशव्याख्या :- हे अग्नि देवता! कर्म और उपासना का अनुष्ठान करने वाले हमको अपने द्वारा दिये गये अनुष्ठान के फल स्वरुप सन्मार्ग से ले चलो। गमनागमनशील दक्षिण मार्ग से बार-बार जाकर के थके हुए हमको गमनागमन वर्जित मार्ग से ले चलिए। हे दीप्तिमान हमारे द्वारा किये गये सम्पूर्ण ज्ञान और कर्मों को जानते हुए आप हमारे द्वारा किये गये कुटिल और

www.OmShreeMadhavanandji.org

निंदित स्वाभाविक कर्मों को नष्ट कर दीजिए। ताकी हम विशुद्ध होकर के इष्ट को प्राप्त कर सके। हम इस समय आपके किसी भी प्रकार की सेवा शुश्रुषा करने में समर्थ नहीं हैं। किंतु बार-बार नमस्कार मात्र से आपकी सेवा प्रार्थना करते हैं।।१८।।

इस प्रकार श्री मत्परमहंस परीव्राजकाचार्य अनन्त
श्री विभूषित महामण्डलेश्वर स्वामी
अखण्डानन्द सागर कृत सान्वयार्थ
तात्पर्य प्रकाशिनी हिन्दी
व्याख्या समाप्त हुई।।

www.OmShreeMadhavanandji.org

त. धंधुका, जि. अहमदाबाद, १३. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. चमारड़ी, त. बल्लभीपुर, जि. भावनगर, १४. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. उमराला, जि. भावनगर १५. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. चोगठ, त. उमराला, जि. भावनगर, १६. श्री माधवानन्द आश्रम, .मु.पो. डंभालीया, त. उमराला, जि. भावनगर, १७. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. पीपलीया, त. सिंहोर, जि. भावनगर, १८. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. पालड़ी, त. सिंहोर, जि. भावनगर, १९.श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. सुरका (नाना), त. सिंहोर, जि. भावनगर, २०. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. घांघली, त. सिंहोर, जि. भावनगर, २१. श्री माधवानन्द आश्रम, प्रगटेश्वर महादेव के पास, मु.पो. सिंहोर, जि. भावनगर, २२. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. भींगराड़, त. दामनगर, जि. अमरेली, २३. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. धारूका, त. उमराला, जि. भावनगर, २४. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. दड़वा (रां), वाया-घोला जं., त. उमराला, जि. भावनगर, २५. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. भांभण, त. बोटाद, जि. भावनगर, २६. श्री माधवानन्द आश्रम, रामनाथ महादेव के पास, मु.पो. लीबंडी, जि. सुरेन्द्रनगर, २७. श्री माधवानन्द आश्रम, कोझवे रोड़, मु.पो. जोरावरनगर, जि. सुरेन्द्रनगर, २८. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. विरता, वाया- धीणोज, त. चाणस्मा, जि. महेसाणा, २९. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. इसनपुर (मोटा), त. व जि. गाँधीनगर, ३०. श्री माधवानन्द आश्रम, गाँधी चौक के पास, मु.पो. कपड़वंज, जि. खेड़ा, ३१. श्री माधवानन्द आश्रम, सरस्वती हाईस्कूल के पास, मु.पो. कठलाल, त. कपड़वंज, जि. खेड़ा, ३२. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. लींबासी, त. मातर, जि. खेड़ा, ३३. श्री माधवानन्द आश्रम, महादेव के पास, मु.पो. खांधली, त. मातर, जि. खेड़ा, ३४. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. ओझराला, वाया-डाकोर, त. ठासरा, जि. खेड़ा, ३५. श्री माधवानन्द आश्रम, कुडंवाली भागोल, मु.पो. सोजित्रा, त. पेटलाद, जि. खेड़ा, ३६. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. नार, त. पेटलाद, जि. खेड़ा, ३७.श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. पलोल, त. पेटलाद, जि. खेड़ा ३८. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. वडदला, त. पेटलाद, जि. खेड़ा, ३९. श्री माधवानन्द आश्रम, टावर के पास, मु.पो. धर्मज, त. पेटलाद, जि. खेड़ा, ४०. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. भादरण, त. बोरसद, जि. खेड़ा, ४१. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. आंकलाव, त. बोरसद, जि. खेड़ा, ४२. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. कंथारीया, त. बोरसद, जि. खेड़ा, ४३. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. हलदरी, त. बोरसद, जि. खेड़ा, ४४. श्री माधवानन्द आश्रम, मु.पो. खड़ोल, त. बोरसद, जि. खेड़ा, ४५. श्री माधवानन्द आश्रम, मृत्युञ्जय महादेव के पास, मु.पो. करमसद, त.व जि. आणन्द, ४६. श्री माधवानन्द आश्रम, कंन्याशाला के पास, मु.पो. नापाड़, त. व जि. आणन्द, ४७. श्री माधवानन्द आश्रम मु. व पो. मालसर तहसील सीनोर जि. वड़ोदरा

www.OmShreeMadhavanandji.org

परम पूज्य १०८ ब्रह्म स्वरूप स्वामी श्री माधवानन्द जी महाराज

परम पूज्य १०८ ब्रह्म स्वरूप स्वामी श्री शिवोऽहं सागर जी महाराज

प्रकाशकः-स्वामी श्री शिवोऽहं सागर अन्नक्षेत्र ट्रस्ट (रजि०)
चांदोद, जि- वडोदरा, गुजरात-३९११०५

मुद्रक -गोल्डन टैम्पल प्रेस, पहाड़ी बाजार कनखल, हरिद्वार फोन- ४१५९१६

www.OmShreeMadhavanandji.org

ॐ

For more information about

Shree Madhavanand Ashram

please visit our website

www.OmShreeMadhavanandji.org